IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

*कुम्भमेले को बढावा देने में आदि शंकराचार्य की भूमिका

डॉ. लीना कुलकर्णी
Project Director

कुम्भमेला अति प्राचीन काल से मनाया जाता है। कुम्भमेले का इतिहास कम से कम 850 साल पुराना है। माना जाता है की आदि शंकराचार्यने इसकी शुरुआत की थी। लेकिन कुछ कथाओं के अनुसार कुम्भ की शुरुआत समुद्रमंथन के आदिकाल से ही हो गयी थी। मंथन में निकले अमृतकलशसे कुछ अमृत के बिंदू हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन और नासिक (त्र्यंबकेश्वर) इन चार स्थानों पर ही गिरे थे, इसलिये इन चार स्थानों पर ही कुम्भमेला हर तीन बरस बाद लगता है। बारह साल बाद यह कुम्भमेला अपने पहले स्थान पर वापस पहुँचता है। लेकिन कुछ दस्तावेज बताते हैं की कुम्भमेला इसवी पूर्व 525 में शुरु हुआ था।

कुम्भमेले के आयोजन का प्रावधान कब से है इस बारे में विद्वानों में अनेक भ्रांतियाँ हैं। वैदिक और पौराणिक काल में कुम्भ तथा अर्धकुम्भ स्नान में आज जैसी प्रशासनिक व्यवस्था का स्वरूप नहीं था। कुछ विद्वान गुप्त काल में कुम्भ के सुव्यवस्थित होने की बात करते हैं। परंतु प्रमाणित तथ्य सम्राट शिलादित्य हर्षवर्धन (617-647 ई.) के समय से प्राप्त होते हैं।

राजा हर्षवर्धनने कुम्भमेले का आयोजन एक महान मेले के रूप में किया था और उन्होंने उसे संतों, साधुओं और संप्रदायों के महामोक्ष परिषद का नाम दिया था। इसके पश्चात् आठवी शताब्दी में आदि शंकराचार्यने, आज जैसा देख रहे हैं, लगभग वैसेही कुम्भमेले का आयोजन किया था। श्रीमद् आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य तथा उनके शिष्य सुरेश्वराचार्यने दशनामी संन्यासी अखाडों के लिये संगम तट पर स्नान की व्यवस्था की।

जिस कुम्भपर्व का उल्लेख वेदों और पुराणों में मिलता है, उसकी प्राचीनता के संबंध में किसीको संदेह होनेका अवसर ही नहीं है। किंतु यह बात अवश्य विचारणीय है की कुम्भमेले का धार्मिक रूप में प्रसार करने का श्रीगणेशा किसने किया? इस विषय में बहुत अन्वेषण करनेपर सिद्ध होता है की कुम्भमेले को प्रवर्तित करनेवाले आदि शंकराचार्य हैं। ऐसा प्रतित होता है की उन्होंने कुम्भपर्व के प्रचार की व्यवस्था केवल धार्मिक संस्कृति को सुदृढ करने के लिये की थी।

आदि श्रीशंकराचार्यने कुम्भमेले को प्रोत्साहित किया और लोकप्रिय बनाया था और सभी भारतीय लोगों को कुम्भमेले में भाग लेकर उससे लाभ प्राप्त करने का निमंत्रण दिया था। उनके प्रयत्नों के बिना हिंदू धर्म को एकीकृत करना संभव नहीं हो पाता। सारे विश्व में बौद्ध धर्म विस्तृत हो रहा था। हिंदूओं में आंतरिक युद्ध हो रहा था। प्रत्येक संप्रदाय, प्रभाग एक दूसरे पर अपनी अपनी श्रेष्ठता का दावा करता था।

भारतीय तत्त्वज्ञान की शाखा अद्वैत वेदांत में आदि शंकराचार्यने प्रमुख भूमिका निभायी थी। अद्वैत का शाब्दिक अर्थ "दो नहीं' या "केवल एक ही है' ऐसा होता है। अद्वैत कहता है की, ब्रह्म असली स्वभाव है। ब्रह्म अनंत, अचल और शुद्ध है। "यह जगत् असत्य है और ब्रह्म सत्य है', यह अद्वैत का मुख्य सिद्धांत है। जब शंकराचार्यजी दृश्य पट पर आयें तब सनातन हिंदू धर्म का अवमूल्यन हो रहा था और अपने प्रयत्नों के द्वारा उन्होंने इसकी फिर से स्थापना की और इसे मजबूत स्थिति प्रदान कर दी। उन्होंने पूरे भारतभर में बिना थके दक्षिण में केरला से लेकर उत्तर में जोशी मठ तक और पश्चिम में द्वारिका से लेकर पूर्व में जगन्नाथपुरी तक यात्राएँ की थी। उनकी इन व्यापक यात्राओं के कारण पूरा देश अपनी आध्यात्मिक विरासत के लिये जाग उठा और उन्होंने भारत को एक बनाया। आदि शंकराचार्यने दस मुख्य अखाडों, या धार्मिक संप्रदायों को एक दूसरे के साथ संपर्क में रहने एवं धार्मिक विचारविमर्श करने और जनसमुदायों को आध्यात्मिक मार्गदर्शन देने के लिये एक होकर कुम्भमेले में भाग लेने के निर्देश दिये थे। आदि शंकराचार्यने शैव संप्रदाय को एकजूट करने हेतु साधुओं का संप्रदाय स्थापन किया। उन्होंने कुछ शिष्यों को एकत्रित किया और अद्वैत तत्त्वज्ञान को स्थापित करने के लिये मीमांसा के कुछ सिद्धांतों को गलत साबित किया। शैव संप्रदाय जीवात्माओं की एकरूपता मानता था और उस वास्तविकता को मानता था की यह एकरूपता ब्रह्म के नाम से जाने जाते परमात्मा की अनन्य शक्ति से लायी गयी थी।

दूसरी और शिव संप्रदाय अर्हताप्राप्त वेदांत के सिद्धांतों को मानता था। शंकराचार्यजी कहते हैं की इस जगत् में जो कुछ भी है, वह परमब्रह्म का ही तत्त्व है। वे कहते हैं की, मानव भी ब्रह्म है। शैव संप्रदाय अद्वैत के सिद्धांत पर आधारित है। भगवान शिव को परमब्रह्म या परमआत्मा माना जाता है, जो कई व्यक्तिगत आत्माओं को जन्म देते हैं। धर्म के वैष्णव संप्रदाय में भगवान विष्णु को परमब्रह्म माना जाता है, जो कई व्यक्तिगत आत्माओं को जन्म देते हैं। वैष्णवों के अनुसार भगवान विष्णु परम भगवान है।

आदि शंकराचार्यने मठाधीशों की व्यवस्था के संबंध में "मठाम्नाय' नामक ग्रंथ की रचना में इसे स्पष्ट किया है। अद्वैत मत के अनुसार यह सात "आम्नाय' प्रचलित है। "आम्नाय' का अपभ्रंश रूप "अखाडा' है। किंतु डॉ। भगवतिप्रसाद सिंह की मान्यता है की, "अखाडा' "अखंड' शब्द का बिगडा हुआ रूप है। इन अखाडों का निर्माण राष्ट्र एवं हिंदू संस्कृति के लिये देश और काल के अनुसार हुआ था, जिसका उद्देश्य आज भी कायम है।

नागा संन्यासी अखाडों का निर्माण शास्त्र और शस्त्र, धर्म और सेना एवं ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों के समन्वित रूप से हुआ था। इसमें मुख्य बात यह है की, आदि शंकराचार्यने वैदिक एवं वेदांत के प्रचार-प्रसार के लिये इन समस्त संन्यासियों को संगठित किया था।

सनातन धर्म के अखाडों का प्रारंभ आठवी शताब्दी के मध्य आदिगुरु शंकराचार्य द्वारा किया जाना माना गया है। इन अखाडों का उद्‌भव इसलिये किया गया क्योंकि भारत के धर्म और वैभव पर विभिन्न धर्मों के विदेशियों द्वारा आक्रमण किये जा रहे थे और यहाँ की धनसंपदा को लूटा गया तथा देश के वैभव को नष्ट किया गया। इससे देश को धर्म से लेकर ईश्वर तक की चुनौतियों का सामना करना पड रहा था। तब आदि शंकराचार्यने सर्वप्रथम सनातन धर्म को कायम रखने के लिये देश के चार भागों में चार पीठों को निर्माण किया, जिन्हे गोवर्धनपीठ, शारदापीठ, द्वारकापीठ और ज्योतिर्मय पीठ का नाम दिया और देश की जनता के साथ ही मठों और मंदिरों को लूटने से बचाने तथा जनता की रक्षा करने के लिये सनातन धर्म के विभिन्न संप्रदायों की सशस्त्र शाखाओं के रूप में अखाडों की स्थापना की।

देश की जनता के साथ ही मठों और मंदिरों की संपत्ति को लूटने से बचाने तथा जनता की रक्षा करने के लिये सनातन धर्म की विभिन्न संप्रदायों की सशस्त्र शाखाओं के रूप में अखाडों की स्थापना की।

ऐसा कहा जाता है की, भारत देश के स्वतंत्र होने के बाद इन अखाडों ने अपनी सैनिक प्रवृत्ति से स्वयं को दूर कर लिया। आज भी अखाडों में इनकी परंपरा कायम है। ये अखाडें वर्तमान में सनातन धर्म की परंपराओं और संस्कृति के संवाहक बने हुए हैं।

इस तरह कुम्भमेला पूरी मानवजाति के आध्यात्मिक उत्थान के लिये एक साधन प्रदान करता है। यह वैदिक ग्रंथों और परंपराओं में पाया गया समयसम्मानित आध्यात्मिक ज्ञान याद करने का समय है। यह एक ऐसा समय है, जब सब समाज सच में एकत्रित आता है। एकता, बंधुभाव इसमें दिखता है।

आदि शंकराचार्यजी के कुम्भप्रवर्तक होने के कारण आज भी कुम्भपर्वका मेला मुख्यत: साधुओं का ही माना जाता है। वस्तुत: साधुमंडली ही कुम्भका जीवन है। आदि शंकराचार्यने जिस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये कुम्भपर्व को प्रवर्तित किया था, आज उसमें जो उद्देश्य की पूर्ति के लिये कुम्भपर्व को प्रवर्तित किया था, आज उसमें जो आवश्यकता से अधिक कमी आ गयी है, वह किसीसे छिपी नहीं है।

Related Project has been undertaken with the support of ICSSR

*** संदर्भग्रंथ :-**

१) तत्त्वबोध एवं आत्मबोध – व्याख्या और अनुवाद – नंदलाल दशोरा – रणधीर प्रकाशन.

२) आदि शंकराचार्य एवं अद्वैत – डॉ. कमल शंकर श्रीवास्तव.

३) आद्य शंकराचार्य – शिवदास पांड्ये – प्रभात प्रकाशन.